आठवाँ अध्याय

उपसंहार

प्रेमचंद-साहित्य में भारतीय किसान की संश्लिष्ट प्रतिमा

प्रेमचंद ने अपने साहित्य में भारतीय किसान का व्यापक और संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने भारतीय किसान की इतिहास निरपेक्ष तस्वीर पेश करने का प्रयास नहीं किया है। इसलिए उनके साहित्य से भारतीय किसान की 'शाश्वत' तस्वीर निकालना निरर्थक ही होगा। उन्होंने अपने साहित्य में समकालीन किसान की तस्वीर पेश की है। समकालीन किसान की प्रेमचंद द्वारा प्रस्तुत तस्वीर कितनी पूर्ण है, इसी बिन्दु पर विचार किया जा सकता है। उन्होंने उन सब स्थितियों - परिस्थितियों का वर्णन अपने साहित्य में विस्तार से किया है, जिनमें भारतीय किसान को जीवन बसर करना पड़ रहा है। उन परिस्थितियों से संघर्ष करता हुआ, टूटता हुआ, समझौता करता हुआ, परिस्थितियों को तोड़ता हुआ और नयी परिस्थितियों का निर्माण करता हुआ भारतीय किसान का 'व्यक्तित्व' प्रेमचंद की रचनाओं में उभर कर आता है।

इस संदर्भ में एक बात द्रष्टव्य है कि प्रेमचंद के साहित्य में संपूर्ण भारतीय किसान का संपूर्ण चित्र उपस्थित नहीं हुआ है। भारत सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से इतना विशाल देश है, उसमें किसानों की भी इतनी भिन्नता हैं, कि उन्हें किसी एक चरित्र में समेटना असंभव है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक के भारतीय किसान की तस्वीरों की जो भिन्नताएँ और विशिष्टताएँ हैं, उन्हें अपने साहित्य में रचनाकार ने समेटने का मोह भी नहीं किया है। यद्यपि उस युग में संपूर्ण भारत अंग्रेजों के अधीन था और इस रूप में भारतीय किसान एक ही औपनिवेशिक राज्य सत्ता के विरुद्ध संघर्ष कर रहा था। फिर भी

उनमें कुछ भिन्नताएँ थीं । भारत के कुछ प्रांत देशी राजाओं के अधीन थे । अंग्रेजी भारत में भी इस्तमरारी और रैयतवारी की अलग-अलग भूमि-व्यवस्थाएँ विद्यमान थीं । उनमें भी कुछ क्षेत्रीय भिन्नताएँ रही हैं । प्रेमचंद की रचनाओं में उन किसानों का वर्णन है, जो इस्तमरारी बन्दोबस्त के अन्दर जीवन व्यतीत कर रहे थे । प्रेमचंद के किसान पात्रों का संघर्ष और उनकी पीड़ा के मूल में कहीं न कहीं इस्तमरारी बन्दोबस्त रहा है । भौगोलिक दृष्टि से भी प्रेमचंद ने पूर्वी उत्तर प्रदेश के किसानों को अपने साहित्य में उपस्थित किया है । इनमें अवध, फैजाबाद, प्रतापगढ़, रायबरेली, इलाहाबाद, बनारस, गोरखपुर, लखनऊ, बांदा के आसपास के किसान शामिल हैं, जहाँ स्वयं प्रेमचंद रहे भी हैं । चूँकि इन स्थानों पर अधिकतर हिन्दू किसान ही रहते हैं, अतः संस्कारों की दृष्टि से प्रतिनिधि भारतीय किसान का सर्जन करते हुए प्रेमचंद ने हिन्दू किसानों को ही इसके लिए चुना है । हालांकि कादिर और जुम्मन शेख जैसे मुस्लिम चरित्र भी उनके साहित्य में आते हैं, लेकिन समाज की तरह उनके साहित्य में भी वे अल्पसंख्यक ही हैं । इस तरह प्रेमचंद ने किसानों की आध्यात्मिक विचार-प्रणाली का संकेत करते हुए उन्हें हिन्दू सांस्कृतिक परंपरा के भीतर ही रखा है । इस तरह प्रेमचंद के भारतीय किसान के प्रतिनिधि चरित्र सीमित क्षेत्र के निवासी हैं— उन्हें संपूर्ण भारतीय किसानों का प्रतिनिधि नहीं कहा जा सकता ।

इसके अलावा उस युग के किसानों में भी अनेक स्तर मिलते हैं । हालांकि उन्होंने (पूर्वी उत्तर प्रदेश के) उन सभी स्तरों का चित्रण किया है, फिर भी किसानों के बीच पनप रही इस भिन्नता को किसी पात्र में समेटना बहुत कठिन कार्य होता है, अतः इस संदर्भ में भी प्रेमचंद ने रचनात्मक चुनाव का रास्ता ही अपनाया है । भारत की जाति-व्यवस्था भारतीय किसानों की एकता में बहुत बड़ी बाधा है । प्रेमचंद ऐसे राष्ट्रीय रचनाकार हैं, जिन्होंने किसानों की इस जातिवादी भिन्नता के बीच जो एकता दिखाई देती है, उसी को रेखांकित किया है । प्रेमचंद के पात्र जब पाठकों के सामने आते हैं तो पाठकों के मन में उनकी जाति की जिज्ञासा पैदा नहीं होती और न ही प्रेमचंद अनावश्यक रूप से

रही बदलती भी है । अर्थ व्यवस्था के कारण किसानों के व्यक्तित्व का जो रूप बनता है, उसी को प्रेमचंद चित्रित करते हैं ।

मोटे तौर पर उस युग में तीन तरह के किसान थे । कुछ ऐसे लोग थे, जिनके पास जमीन जोतने का अधिकार तो था, लेकिन वे उस पर स्वयं खेती नहीं करते थे । 'गोदान' के पंडित दातादीन ऐसे ही किसान थे । ये खेती के अलावा यजमानी और लेन-देन का धंधा भी करते थे । अधिकतर ब्राह्मण जाति के किसान स्वयं हल नहीं चलाते । प्रेमचंद ऐसे व्यक्तियों को किसान नहीं मानते । दूसरी श्रेणी उन किसानों की रही है, जिनके पास जमीन जोतने का अधिकार नहीं होता । वे दूसरों के खेतों पर काम करते हैं । ऐसे खेतिहर मजदूर अधिकतर 'नीची समझी जाने वाली' जातियों के लोग होते हैं । प्रेमचंद ने दिखाया है कि आर्थिक दबावों से पीड़ित होकर किसान खेत-मजूर बन रहे हैं। 'पूस की रात' का हल्कू, 'बलिदान' में गिरधारी का बेटा और 'गोदान' में स्वयं होरी अंत में खेत मजदूर बनने पर मजबूर हो जाता है । ग्रामीण समाज में खेत मजदूरों की स्थिति और उनकी समस्याओं का चित्रण प्रेमचंद ने किया है, फिर भी इनके चित्रण में प्रेमचंद ने ज्यादा रुचि नहीं दिखायी है और इस तरह इन लोगों को भी प्रेमचंद 'किसान' नहीं मानते । इसके अलावा कुछ ऐसे लोग भी गाँवों में रहते हैं, जिनके पास जमीन जोतने का अधिकार भी होता है और वे स्वयं अपने खेतों में काम करते हैं और जमीन की लगान देते हैं । प्रेमचंद इन्हें ही वास्तविक किसान मानकर इनकी समस्याओं का चित्रण करते हैं । ऐसे लोग अपनी जमीन को बचाने के लिए जो संघर्ष करते हैं, उसे प्रेमचंद ने प्रचुर सहानुभूति से उपस्थित किया है । ऐसे लोग अधिकतर मध्यम श्रेणी की जातियों के होते हैं । होरी, मनोहर, कादिर, गिरधारी, बलगू चौधरी, झींगुर जैसे पात्र ही किसान पात्र हैं । जब किसान कहा जाता है, तब अधिकतर प्रेमचंद का तात्पर्य इन्हीं लोगों से होता है । प्रेमचंद इसी वर्ग के पक्षधर रचनाकार हैं । वे किसान को किसान के रूप में ही देखना चाहते हैं और इसी वर्ग में रहते हुए इनकी दशा-सुधारने का प्रयास करते हैं । और इसी वर्ग के रूप में

उन्हें सामाजिक महत्त्व और प्रतिष्ठा भी दिलाना चाहते हैं। इन किसानों के मज़दूर बन जाने में वह उनका पतन देखते हैं। इसी कारण कष्टों के बावजूद किसान की जो किसान बने रहने की ज़िद नुमा आकांक्षा होती है, प्रेमचंद उसे बहुत महत्त्व देते हैं। यह किसान की (एक वर्ग के रूप में) अस्तित्व रक्षा का सवाल है। वह उन परिस्थितियों के खिलाफ खड़ा होता है और किसान ही बना रहने में अपनी मर्यादा देखता है। इस मर्यादा रक्षा के लिए किसान जो 'पाप' करता है, प्रेमचंद उसे क्षम्य समझते हैं। यही कारण है कि होरी की अनैतिकता में भी नैतिक गौरव छिपा दिखायी देता है।

प्रेमचंद ने एक तरफ जहाँ उन परिस्थितियों का चित्रण किया है, जिनमें भारतीय किसान को जीवन बसर करना पड़ रहा है; वहाँ उन्होंने उन स्थितियों के बीच जीवन यापन करते हुए मानवीय चरित्र के रूप में किसान चरित्र को भी परिभाषित किया है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि पात्र और परिस्थितियों के बीच क्या और कैसा संबंध होता है? पात्र (मनुष्य) परिस्थितियों का निर्माता है या परिस्थितियाँ ही पात्रों का सर्जन करती हैं। भाववादी रचनाकार मानवीय चेतना को परिस्थितियों के ऊपर मानते हैं और इस तरह चेतना को परिस्थितियों में परिवर्तन में सक्षम मानते हैं। दूसरी तरफ कुछ ऐसे रचनाकार भी होते हैं जो मनुष्य को परिस्थितियों का दास मानते हैं, वह वही करता है जो परिस्थितियाँ अनुमति दें। इस तरह दोनों तरह के रचनाकार पात्र और परिस्थितियों के संबंधों की सरल व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

भाववादियों के अनुसार मनुष्य ही सर्जक है, निश्चयवादियों के अनुसार मनुष्य भोक्ता है। प्रेमचंद के साहित्य में पात्र और परिस्थितियों के द्वन्द्वात्मक संबंध अभिव्यक्त हुए हैं। पात्र और परिस्थितियों का संबंध इतना जटिल होता है कि दोनों को स्वतंत्र रूप से पहचानना भी मुश्किल है। परिस्थितियों से जहाँ मानवीय चरित्र निर्मित होता है, वहीं चरित्र परिस्थितियों को अपनी क्रियाशीलता

को परिवर्तित करता रहता है और इस तरह मानवीय क्रियाशीलता नवीन परिस्थितियों का निर्माण करती है । इस संघर्षपूर्ण संबंध में ही पात्र और परिस्थितियों को पहचाना जा सकता है । निश्चय ही होरी और मेहता के व्यक्तित्व में जो अन्तर है, उसका कारण उनकी जीवन स्थितियों का अन्तर भी है । लेकिन समान परिस्थितियों में रहते हुए भी होरी और हीरा के चरित्रों में भेद है । एक ही चरित्र भिन्न परिस्थितियों में जाकर बदल जाता है, यह परिवर्तन परिस्थितियों की ही देन है । गोबर के व्यक्तित्व इस दृष्टि से द्रष्टव्य है । तात्पर्य यह है कि भारतीय किसान की चरित्रगत विशेषताओं का विश्लेषण करते हुए हमें उन परिस्थितियों को नहीं भूल जाना चाहिए, जिनमें उसे जीवन-बसर करना पड़ रहा है ।

प्रेमचंद ने अपने साहित्य में अनेक जीवन्त किसान-चरित्रों को उपस्थित किया है, जिनमें मनोहर, होरी, अलगू चौधरी, झींगुर, कादिर आदि मुख्य हैं । प्रेमचंद के आलोचकों ने यह सवाल उठाया है कि प्रेमचंद के अनुसार प्रतिनिधि भारतीय किसान चरित्र कौन सा है ?[1] — मनोहर या होरी ? उग्र स्वभाव का मनोहर या नम्र स्वभाव का होरी ? — क्रांतिकारी मनोहर या परंपरावादी - समझौतावादी होरी ? आखिर किसे भारतीय किसान का प्रतिनिधि माना जा सकता है ।

सवाल को इस रूप में उठाने में आलोचकों की मंशा यह रहती है कि होरी ही ('गोदान' के पात्र ही) भारतीय किसान का वास्तविक प्रतिनिधित्व करते हैं । इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है (प्रेमचंद की नजरों में) कि भारतीय किसान अंध-विश्वासी है, रीतिरिवाजों में जकड़ा हुआ है, [illegible] की परंपरागत संस्कृति को वैध मानता है, परिस्थितियों से समझौता कर लेता है और इस तरह स्वाधीनता आन्दोलन में संघर्षशील भूमिका नहीं निभा रहा है । तथा इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है कि मनोहर, बलराज की (तथाकथित) क्रांतिकारिता रचनाकार के अपने मन का उत्साह है, वह भारतीय किसान के यथार्थ रूप के करीब नहीं है । निश्चय ही ये निष्कर्ष सचेत रूप से नहीं निकाले

जाति, लेकिन उनके तर्कों की परिणति ऐसी निष्कर्षों में होती है ।

होरी और मनोहर के व्यक्तित्वों में जो विरोध दिखाया गया है, वह कितना वास्तविक है ? इस पर भी विचार किया जाना चाहिए । क्या उनके व्यक्तित्वों में जो विरोध दिखायी पड़ता है वह वास्तविक है या ऊपरी दिखावा मात्र ? क्या उनका यह विरोध पात्रगत है या परिस्थिति जन्य ? सामान्यतः कहा जा सकता है कि होरी रूढ़िवादी भारतीय किसान का प्रतिनिधि है और मनोहर -बलराज 'क्रांतिकारी' किसान का प्रतिनिधि है । होरी अपने तीन बीघे के खेत के लिए अनैतिक कर्म करता है और फिर उसके अपराध बोध से ग्रस्त रहता है, जबकि बलराज को अपनी जमीन की चिन्ता नहीं है । वह मर्यादा की कीमत पर जमीन बचाना नहीं चाहता । बलराज के पास 'अखबार' आता है, जिसमें देश-विदेश की खबरें छपी होती हैं । होरी इस नवीन ज्ञान से वंचित है । वह गोबर से कहता है : "बेटा, जब तक मैं जीता हूँ, मुझे अपने रास्ते चलने दो । जब मैं मर जाऊँ, तो तुम्हारी जो इच्छा हो, वह करना।"[2] इस तरह होरी परंपरा का अनुगामी है । बलराज किसानों का भविष्य है और होरी उनका अतीत रूप है । होरी वह किसान है जिसे अंततः मर जाना है। (गोबर किसानों के भविष्य का प्रतीक इसलिए नहीं कहा जा सकता क्योंकि वह 'किसानी' छोड़ चुका है और मजदूर बन गया है ।) सदियों के अत्याचार ने भारतीय रूढ़िवादी किसान में जो धैर्य और सहनशीलता का 'गुण' (?) विकसित किया है, जिसके कारण वह अन्याय के खिलाफ विद्रोह नहीं कर पाता ; होरी उस किसान का प्रतिनिधि है । लेकिन इस संदर्भ में यह द्रष्टव्य है कि 'गोदान' में अकेला 'होरी' ही सम्पूर्ण भारतीय किसान का प्रतिनिधि नहीं है, अकेला तो वह 'अधूरा' पात्र है । धनिया से मिलकर ही उसमें पूर्णता आती है । होरी और धनिया मिलकर एक संश्लिष्ट किसान चरित्र का रूप लेते हैं । और इस तरह देखा जाय तो मनोहर या बलराज की ज्वाला धनिया के तेज के सामने मद्धिम ही ठहरती है ।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में मनोहर क्रांतिकारी है और दब्बू है ? 'प्रेमाश्रम' का संतुलित अध्ययन इसकी पुष्टि नहीं करता । आवेश में आकर मनोहर एक बार रुपये सेर घी जमींदार को देने से इन्कार कर देता है । बिलासी और कादिर उसे समझाते हैं, इससे उसका आवेश शान्त होता है। इस पर टिप्पणी करते हुए प्रेमचन्द ने मनोहर की प्रकृति पर इस तरह टिप्पणी की है : " यद्यपि मनोहर बढ़-बढ़ कर बातें कर रहा था, पर वास्तव में उनका इन्कार अब परास्त तर्क के समान था । यदि बिना दूसरों की दृष्टि में अपमान उठाये बिगड़ा हुआ खेल बन जाय तो उसे कोई आपत्ति नहीं थी । हाँ, वह स्वयं क्षमा-प्रार्थना करने में अपनी हेठी समझता था । एक बार तनकर फिर झुकना उसके लिए बड़ी लज्जा की बात थी ।"[3] इस घटना के बाद मनोहर के घर से बेगार में दूध जाता है और वह स्वयं भी बेगार करने जाता है । उसकी अकड़ उसके व्यक्तित्व का 'भय' रह जाती है, 'वस्तु' तत्व उतना आवेग-मय नहीं रह पाता । इसी तरह बलराज तो मनोहर से भी ज्यादा विद्रोही है ; लेकिन मनोहर उसके साथ गौस खाँ की हत्या करने रवाना होता है तो वही बलराज कहता है — " मेरा तो कलेजा थर-थर काँप रहा है ।"[4]

अब इस पर भी विचार होना चाहिए कि क्या होरी इतना डरपोक है । रायसाहब के घर पर पठान के वेश में मेहता मालती को भगा लेना चाहता है, उस समय होरी बेधड़क होकर उससे भिड़ जाता है । इसी तरह दमड़ी बसोर और पुनिया में कहा सुनी हो जाती है । होरी को लगता है कि दमड़ी ने पुनिया को पीट दिया है । तो होरी के "खून ने जोश मारा और [illegible] की ऊँची बाँध को तोड़ता हुआ, सब कुछ अपने अन्दर समेटने के लिए बाहर निकल पड़ा । चौधरी को लात जमाकर बोला — अब अपना भला चाहते हो चौधरी, तो यहाँ से चले जाओ, नहीं तुम्हारी लहास उठेगी । तुमने अपने को समझा क्या है ? तुम्हारी इतनी मजाल कि मेरी बहू पर हाथ उठाओ ।"[5] इसी तरह हीरा और धनिया के झगड़े में भी होरी पहुँच जाता है। मनोहर ने बिलासी के अपमान का बदला लेने के लिए गौस खाँ की हत्या कर दी, वह यही

है । लेकिन क्या धनिया का अपमान होरी चुपचाप पी जाता ? जब पुनिया का अपमान होरी नहीं सह सका तो धनिया का अपमान वह कैसे सह सकता है । होरी के चरित्र का वस्तुगत अध्ययन बताता है कि धनिया के लिए होरी मरने-मारने पर उतारू हो सकता है और इस स्तर पर वह मनोहर जैसा ही क्रोधी और साहसी है । 'मुक्तिमार्ग' का किसान झींगुर भी जोश में आकर बुद्धू गड़रिये से झगड़ बैठता है । लेकिन गाँव के अन्य किसान डरे सहमते हैं । और किसान सामूहिक रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं : ''वास्तव में हम किसानों का कल्याण दबे रहने में ही है । ईश्वर को भी हमारा सिर उठाकर चलना अच्छा नहीं लगता ।''[6]

इस तरह दब्बूपन भारतीय किसान के व्यक्तित्व का स्वाभाविक गुण नहीं है, बल्कि समकालीन समाज व्यवस्था के लम्बे अनुभव से किसान इसी निष्कर्ष पर पहुँचता है कि उनकी कुशल दबे रहने में ही है । मनोहर भी आखिर शांत होने के बाद इसी निष्कर्ष पर पहुँचता है और होरी के जीवन अनुभव का सार भी यही है । मनोहर गौस खाँ की हत्या से पहले मानसिक रूप से अपनी मृत्यु के लिए भी तैयार हो जाता है । जिन ठंडे और निश्चयात्मक शब्दों में वह बलराज को जाते-जाते हिदायत देता है, उनमें मृत्युपूर्व की नीरवता निहित है । वास्तव में, सम्पूर्ण समाज-व्यवस्था किसान के साहस का संगठित रूप में विरोध करती है । उस विरोध से किसान का साहस दब जाता है । यह दबा हुआ साहस ही कभी-कभी भभक कर सामने आता है । लेकिन साहस की वह ज्योति बुझते हुए दीपक के समान होती है । किसान की यथार्थ की पकड़ उसे यही कहती है कि उसके जीवन में बहादुरी के लिए कोई स्थान नहीं है । होरी गोबर से कहता है : '' जब सिर पर पड़ेगी तब मालूम होगा बेटा, अभी जो चाहे कह लो । पहले मैं भी यही सब बातें सोचा करता था, पर अब मालूम हुआ कि हमारी गरदन दूसरों के पैरों के नीचे दबी हुई है, अकड़कर निबाह नहीं हो सकता ।''[7] इस तरह प्रश्न किसान के साहसी या कायर होने का

नहीं है, उन परिस्थितियों का भी है, जिनमें उसके साहस या उसकी 'कायरता' की परीक्षा होनी है ।

प्रेमचंद मानते हैं कि किसान निरक्षर अवश्य है लेकिन मूर्ख नहीं है । वह परिस्थितियों का बहुत ही यथार्थवादी विश्लेषण करके अपने लिए सही निष्कर्ष निकाल लेता है । होरी दब्बू इसलिए दिखायी देता है क्योंकि किसानों का अपना कोई राजनीतिक संगठन नहीं है । ऐसे लोग उसे दिखायी नहीं देते जो संघर्ष में उसका साथ देते । प्रेमचंद यह मानते हैं कि निजी चेतना से किसान आधुनिक संगठन नहीं बना सकते । इसके लिए राष्ट्रीय नेताओं को किसानों के बीच जागृति फैलाने का कार्य करना पड़ेगा । 26 फरवरी 1934 को 'निरक्षरता की दुहाई' नामक टिप्पणी में उन्होंने लिखा : '' अगर राष्ट्रीय का धावा न खड़ा कर दिया गया होता, तो राष्ट्रीय सेवक किसानों में बहुत कुछ संगठन कर चुके होते। मगर यहाँ तो यह नीति है कि प्रजा की राजनैतिक चेतना न जागने पाये, नहीं वह अपने पैरों पर खड़ा होना सीख जायगी । ''[8]

किसानों की विद्यमान चेतना तो असमानता की परंपरागत संस्कृति को वैध मानती है, अपनी बदहाली की जिम्मेदारी अपने भाग्य पर डाल कर संतोष कर लेती है, इस तरह अपने शोषकों को दुश्मन के रूप में नहीं पहचान पाती। होरी इसलिए भी विद्रोह नहीं करता कि उसे अपना शोषण अन्यायपूर्ण नहीं लगता, उसे वह वैध मानता है । शोषण की अवैधता पर बल देने के लिए राष्ट्रीय और जनतांत्रिक चेतना की जरूरत पड़ती है । प्रेमचंद ने समकालीन किसान की जो संश्लिष्ट प्रतिमा खड़ी की है, उसमें किसान (होरी) परंपरागत विद्रोही नहीं है । किसान चेतना में परिवर्तन की आवश्यकता पर बल देने के लिए उसके इस 'मानसिक पिछड़ेपन' को उभार कर सामने रखा गया है । इस तरह उन्होंने यह दिखाया है कि परिवर्तन की शुरुआत कहाँ से की जा सकती

है। उन्होंने जिस परिवर्तनशील रूप में किसान चरित्र को उपस्थित किया है, उससे यह भी लगता है कि यह भारतीय किसान की 'समकालीन' तस्वीर तो है, लेकिन शाश्वत तस्वीर नहीं है। किसान में पीड़ा सहने की जितनी शक्ति है, वह पीड़ा को दूर करने के संगठित संघर्ष में भी लग सकती है। प्रश्न किसानों में राजनीतिक जागृति फैलाने का है। 'नशा' का एक पात्र कहता है: '... असामी भी यही समझता है। अगर उसे सुझा दिया जाए कि जमींदार और असामी में कोई मौलिक भेद नहीं है, तो जमींदारों का कहीं पता न लगे।'[9] इस 'समानता' का प्रचार किसानों में होना अभी बाकी है। और इसी प्रचार से भारतीय किसान के व्यक्तित्व में बुनियादी परिवर्तन होगा।

टिप्पणियाँ

1- '' 'प्रेमाश्रम' के बलराज और मनोहर जैसे किसानों को उन्होंने बहुत अधिक विद्रोही दिखाया था, लेकिन होरी को उन्होंने संतोष, धैर्य, सहनशीलता तथा अंधविश्वास का पुंज दिखलाया, जो भारतीय किसानों की खास विशेषता है। यदि किसान-आन्दोलन की ओर ध्यान दें तो 'प्रेमाश्रम' के सत्रह-अठारह वर्षों के बाद लिखे हुए 'गोदान' में किसान को अधिक विद्रोही दिखाना चाहिए था, लेकिन वास्तविकता यह थी कि तमाम आन्दोलनों के बावजूद भारतीय किसान काफी संतोषी, भाग्यवादी और धैर्यवान रहा है। अपने अनुभवों से प्रेमचंद ने इस तथ्य को अंत में समझा और होरी के रूप में उन्होंने ऐसे ही किसान का चित्रण किया जो तमाम किसानों का प्रतिनिधि हो सका।'' — 'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ', पृ0 144 — डा0 नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण, 1968

'जनवादी लेखन : कितना जनवादी' ?' शीर्षक टिप्पणी में डा0 काशीनाथ सिंह ने 'प्रतिमान-5' में यही बात लिखी है — '' प्रेमचंद के किसानों ने 1923 ई0 में 'प्रेमाश्रम' में आन्दोलन किया था लेकिन उसके बारह-तेरह साल बाद 'गोदान' में आन्दोलन करने लायक नहीं रहे। क्या यह उनका यथार्थ से मुकरना था या जन-विरोध था ? प्रेमचंद कहाँ गलत थे— 'प्रेमाश्रम' में या 'गोदान' में ?'' —प्रतिमान-5, पृ0 10
प्रतिमान — संपादक — श्यामकिशोर और रविन्द्र मेहरोत्रा
प्रतिमान — 5 — वर्ष 3 — अगस्त 1979
प्रकाशक — प्रतिमान सदर बाजार, शाहजहाँपुर —242001

2- गोदान, पृ0 184

3- प्रेमाश्रम, पृ0 14

4- प्रेमाश्रम, पृ0 216

5- गोदान, पृ0 27

6- मानसरोवर, भाग-3, पृ0 243

7- गोदान, पृ0 17

8- विविध प्रसंग, भाग-2, पृ0 507

9- मानसरोवर, भाग-1, पृ0 116

—